JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

प्राणायाम–एक प्राचीन यौगिक पद्धति

[1]रश्मि तिवारी [2]प्रो० कामेश्वर नाथ सिंह

[1]शोध छात्रा [2]प्रोफेसर

रचना शारीर विभाग

रचना शारीर विभाग, आयुर्वेद संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

चिकित्सा विज्ञान संस्थान, वाराणसी

सार: *जन्म लेने के साथ ही प्रत्येक जीव में श्वास–प्रश्वास की गति स्वतः ही प्रारम्भ हो जाती है, इसके रूकते जीव मृत्यु को प्राप्त होता है। प्रत्येक जीव में समस्त जागतिक शक्तियों का मूल प्राण है, अर्थात् प्राण वह मूल तत्व है जो प्रत्येक देह में अविरल रूप से अवस्थित हैं। यह देह में स्थित ७२००० नाड़ियों में जीवरूप में वास करता है। इसके फलस्वरूप ही जीव जीवन–मृत्यु के मध्य आवागमन करता है। वस्तुतः प्राण वह मूल शक्ति है, जिसके प्रवाहित होने पर ही समस्त इन्द्रियाँ अपने–अपने विषयों की ओर प्रवृत्त होती हैं और इसी प्राण के द्वारा विषयों से विमुख भी होती है। समस्त इन्द्रियों में वायु से भी तीव्र गति करने वाली एक इन्द्रिय होती है, वह है मन। यह मन ही जीव के दुःख–सुख का कारण है और इस मन की चंचल वृत्तियाँ प्राण से प्रभावित होती हैं। मन को एकमात्र प्राण ही प्रभावित करने में समर्थ है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि प्राण के आयाम/ठहराव अर्थात् प्राणायाम के द्वारा समस्त इन्द्रियों के साथ मन को नियंत्रित कर जीव दुःख पर विजय प्राप्त कर सकता है।*

भूमिका

प्राणायाम अर्थात् सांस को नियंत्रित करने की प्रक्रिया प्राचीन काल से दिव्य ऋषियों, तपस्वियों और संतों और द्वारा प्रतिपादित एक पूरी तरह से वैज्ञानिक पद्धति है जिसके द्वारा शारीरिक एवं मानसिक द्वंदों को समाप्त किया जा सकता है। इसका प्रयोग करके असाध्य एवं जटिल रोगों को समूल नष्ट करना ऋषि–मुनियों पद्धति रही है और इसके अभ्यास से ऋषि–मुनियों ने अंतःकरण को भी प्राप्त किया है। वायु उन पांच प्रमुख तत्वों में से एक है जिनसे हमारा शरीर बना है, जो हमें जीवित रखता है और हमारे शरीर के महत्त्वपूर्ण घटक –त्रिदोषों (वात–पित्त–कफ) में से एक है, जो हमारा प्राण (सांस के रूप में जीवन) है। शरीर के ये महत्त्वपूर्ण घटक निष्क्रिय हैं, क्योंकि वे स्वयं एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने या शरीर के किसी भी कार्य को प्रभावित करने में सक्षम नहीं हैं। यह वायु ही उन्हें एक स्थान से अन्य स्थानों तक ले जाती है जैसे आकाश में बादल हवा के बल से एक स्थान से दूसरे स्थान तक चले जाते हैं। अतः वायु में ही त्रिदोषों को गति देने तथा अन्य शरीर घटकों को गतिमान करने की क्षमता होती है।

जीव कई दिनों तक बिना भोजन या पानी के जीवित रहते हैं, परन्तु वायु(प्राण) के अभाव में एक क्षण भी जीवन असंभव है। यह प्राण–ऊर्जा ही हमारे जीवन का आधार है और हमें जीवन के साथ विभिन्न प्रकार की बीमारियों से प्रतिरक्षा प्रदान करती है। प्राण हृदय, फेफड़े, मस्तिष्क और रीढ़ की हड्डी सहित शरीर के सभी अंगों, अंगों और महत्वपूर्ण ग्रंथियों को ऊर्जा प्रदान करता है। यह प्राण–ऊर्जा है, जो आँखों को देखती है, कानों को सुनती है, या नाक को सूंघती है और जीभ को बोलने की सामर्थ्य देती है, मुख–मण्डल पर कान्ति लाती है, मस्तिष्क को सोचने की शक्ति प्रदान करती है और पाचन तंत्र को मनुष्य द्वारा ग्रहण किए गए भोजन को पचाने और आत्मसात करने में सक्षम बनाती है। प्राण नासिका द्वारा शरीर में प्रवेश करता है। शरीर में वायु को अंदर खींचकर फेफड़ों तक पहुंचाने की क्रिया को अंतःश्वसन कहा जाता है और इस वायु को शरीर से बाहर फेंकने की क्रिया को निःश्वसन कहा जाता है। श्वसन जीवन को बनाए रखता है और प्राणायाम का आधार है। योग दर्शन के अनुसार श्वसन क्रिया को नियंत्रित करने वाली क्रिया प्राणायाम है। प्राणायाम में विभिन्न चरण होते हैं अर्थात वायु को अंदर लेना, अर्थात पूरक (सांस लेना), कुम्भक (खींची गई वायु को शरीर में कुछ समय तक बनाए रखना), रेचक (वायु को बाहर निकालना अर्थात

वायु को शरीर से बाहर फेंकना) और बाह्य कुम्भक (वायु को बाहर रखना अर्थात श्वास न लेना और न ही वायु को शरीर में प्रवेश करने देना)। नियमित अभ्यास से प्राणायाम के इस चार चरणों वाले अभ्यास को करना आसान हो जाता है। प्राणायाम के इन चार चरणों में प्रवीणता प्राप्त करने पर चित्त अज्ञानता से मुक्त हो जाता है, मन परम वास्तविकता के ज्ञान की उज्ज्वल रोशनी से आच्छादित हो जाता है। तत्पश्चात् साधक धारण करने की क्षमता प्राप्त कर लेता है। जब वायु या ऑक्सीजन जो हमारे शरीर में प्रवेश करती है, तब वायु के साथ एक दिव्य ऊर्जा भी हमारे शरीर में प्रवेश करती है, जो शरीर को जीवित रखती है। प्राणायाम करने का अर्थ केवल वायु को शरीर के अंदर लेना (साँस लेना) और बाहर फेंकना (साँस छोड़ना) नहीं है अपितु ऑक्सीजन के साथ–साथ सम्पूर्ण शरीर में प्राण ऊर्जा को संचारित करना है जिसके द्वारा प्रत्येक जीव का परम शक्ति से संबंध बना रहे। हम जो सांस लेते और छोड़ते हैं वह इस परम शक्ति का एक अंश मात्र है। केवल सांस छोड़ना या अंदर लेना प्राणायाम नहीं है बल्कि यह परम शक्ति से जुड़ाव है जो सम्पूर्ण सृष्टि को संजोये हुए है। इसके साथ सही ढंग से संबंध बनाना और इसे बनाए रखना प्राणायाम के माध्यम से होता है।

प्राण एवं प्राणायाम

प्राण का अर्थ साँस लेना ही नहीं बल्कि वह जीवनीशक्ति है जो साँस लेने और छोड़ने को बाध्य करती है, जो **'प्राणाद्वायुरजायत'** परम पुरुष के प्राण से वायु उत्पन्न हुई। शरीर में वाणी– आँख–कान–नाक–मन तथा विश्व में विभिन्न रूपों में ऊर्जा के रूप में विद्यमान है। इसलिए सभी जीवधारी प्राणी कहे जाते हैं **(ऋग्वेद १०/६०/१३)**।यह प्राण सबका प्रेरक है।यह विराट है और यह सारा जगत इस प्राण से ही चलायमान है **(अथर्ववेद)**।

इन्द्रस्त्वं प्राण तेजसा रुद्रोअसि परिरक्षिता।

त्वमन्तरिक्षे चरसि सूर्यस्त्वं ज्योतिषां पतिः।।२/६।।प्रश्नोपनिषद।।

प्राण ही तीनों लोकों का आधार है, यही प्रलय काल में सबका संहार करने वाला और यही भलीभाँति सबकी रक्षा करने वाला है। यही प्राण अन्तरिक्ष में 'विचरने वाला वायु है, यही अग्नि है चन्द्र तारे एवं समस्त ज्योर्तिगणों का स्वामी सूर्य यही प्राण है।

भावना को परिष्कृत करने के लिये दिव्य प्रकाश में प्राण के द्वारा अपने मन को केंद्रित करना चाहिये। इस तरह मन को केन्द्रित करने से एकाग्रता के साथ विचार शुद्ध होते हैं और इसका सीधा असर भावनाओं पर पड़ता है**(ऋग्वेद ३/३/६–१०)**। मन के द्वारा काम, संशय, श्रद्धा, धारणा, लज्जा, बुद्धि, भय, अधारणा आदि होती है। यह मन ही सम्पूर्ण क्रियाओं का संचालक है **(वृहदारण्यक उपनिषद १/५/३–४/२/६)** / मन ही सारी बौद्धिक क्रियाओं का संचालक है। देखना, सुनना मन के कारण ही होता है। इसलिये काम, संकल्प, सन्देह, श्रद्धा–अश्रद्धा, धैर्य–अधैर्य,धी (बुद्धि, ज्ञान), ह्री (लज्जा), भी (भय) ये सब मन के ही रूप हैं **(मैत्रायणी उपनिषद ६/३)**। प्राण के द्वारा मन को केंद्रित श्वास–प्रश्वास(प्राणायाम) पर चिंतन करके किया जाना चाहिये जिससे आत्मदोष दूर कर मनुष्य जीवन में सफलता प्राप्त कर आनन्द भोगता है **(अथर्ववेद४/२६/१)**। प्राण के व्यापार को स्थिर करके आत्मस्वरूप में प्रवाहित करना प्राणायाम है।

प्राणायाम का मुख्य उद्देश्य नाड़ी को शुद्ध करना है। जिस प्रकार अग्नि सोने में मौजूद अशुद्धि को साफ कर देती है, उसी तरह प्राणायाम शरीर और मन का शोधन कर देता है। प्राण और मन एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं।

मनसः स्पन्दनं प्राणः प्राणस्य स्पन्दनं मनः।।योगवाशिष्ठ ६/६६/४६।।

सांसों पर नियंत्रण रखने से मन स्वतः ही एकाग्र हो जाता है।

तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः।। योग दर्शन २/४६।।

योग दर्शन के अनुसार आसन को सिद्ध करने के बाद अंदर और बाहर जाती सांस को नियंत्रित करना प्राणायाम कहलाता है।

सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुग्पसते।। ईशावास्योपनिषद ६।।

प्राणायाम ब्रह्मांड के साथ जुड़ने और सभी प्राणियों के प्रति आत्मभाव जाग्रत करने की प्रक्रिया है।

अपाने जुहयति प्राणं प्राणेअपानं तथापरे।

प्राणापानगती रुदध्वा प्राणायामपरायणाः।।४/२६।।

महत्वपूर्ण जीवन ऊर्जा या प्राण को नियंत्रित करना प्राणायाम है। प्राण का स्थान हृदय, अपान का स्थान गुदा है **(हृदि प्राणः स्थितो नित्यपानों गुदमंडले योगचूड़ामण्युपनिषद् २३)**। श्वास लेते समय वायु की गति नीचे की ओर तथा श्वास छोड़ते समय वायु की गति ऊपर की ओर होती है। बाहर की वायु को बायीं नासिका से भीतर ले जाकर हृदय में स्थित प्राणवायु को नाभि से होते हुए स्वाभाविक ही अपान में लीन करना (पूरक), फिर प्राण और अपान वायु की गति को रोक देना(कुम्भक) और अन्त में भीतर की वायु को दायीं नासिका से बाहर निकाल देना(रेचक) ही प्राणायाम है।

रामचरितमानस में प्राणायाम का एक रूपक **गोस्वामी तुलसीदासजी** ने अंकित किया है। हनुमान सीता की खोज से वापस आये तो भगवान राम ने पूछा– हनुमान! तुमने सीता को देखा? क्या वह जीवित है? वह अपने प्राणों की रक्षा कैसे करती है? **'कहहु तात केहि भाँति जानकी। रहति करत रच्छा स्वप्रान की।।** हनुमान जी ने उत्तर दिया– **'नाम पाहरू दिवस निसि–** आपके नाम का तो अहर्निश पहरा लगा हुआ है; **'ध्यान तुम्हार कपाट**– आपके चरणों के ध्यान का कपाट लगा है। **'लोचन निज पद जंत्रित जाहि प्रान केहिं बाट ।। रामचरितमानस ५/३०।।** जिनका मन अपने लक्ष्य आराध्य पर टिका हुआ है और उसमें ध्यान रूपी ताला लगा हो उस मन में दूसरा कोई और विचार आये यह संभव नहीं। अब आप ही बतायें कि माँ सीता के प्राण जायें तो किस राह से? अर्थात् प्राण अथवा मन को एक स्थान पर स्थिर कर देना ही प्राणायाम है।

जाबालदर्शनोपनिषद् में भगवान दत्तात्रेय ने प्राणायाम की तीन क्रियाओं को प्रणव माना है –

'वर्णत्रयात्मकाः प्रोक्ता रेचपूरककुम्भकाः। स एष प्रणवः प्रोक्तः प्राणायामस्तु तन्मयः'।।

ध्यानबिन्दूपनिषद् में पूरक, कुम्भक एवं रेचक को क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र कहा गया है –

'ब्रह्मापूरक हत्युक्तो विष्णुः कुम्भक उच्यते। रेचो रुद्र इति प्रोक्तः प्राणायामस्य देवताः'।।

श्वास और प्राण

श्वास एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जो जन्म के समय शुरू होती है और मृत्यु पर रुक जाती है। शरीर के सभी अंगों, अंगों और कोशिकाओं को महत्वपूर्ण ऑक्सीजन प्रदान की जाती है। एक व्यक्ति ऑक्सीजन के बिना अधिकतम 4 मिनट तक जीवित रह सकता है। सभी चयापचय प्रक्रियाओं के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। ऑक्सीजन जीवन है, एक महत्वपूर्ण शक्ति है। इस महत्वपूर्ण ऊर्जा को प्राण कहा जाता है।

प्राण भौतिक शरीर की सभी गतिविधियों के लिए प्राथमिक प्रेरक है। भौतिक शरीर को चौबीसों घंटे सक्रिय बनाए रखने की प्रमुख जिम्मेदारी प्राण शक्ति की है। जन्म से लेकर मृत्यु तक शरीर का विकास अर्थात् बिगड़ना, सुरक्षा और पोषण सब इसी पर निर्भर है। जो व्यक्ति प्राण के रहस्य को समझ लेता है और उसे जीवन का आधार बना लेता है वह निश्चित ही सभी बाधाओं पर विजय प्राप्त कर लेता है। प्राण ही मन और ज्ञानेन्द्रियाँ के कार्य का कारण है। हमें यह समझने की जरूरत है कि प्राण ही एक है, **तान् वरिष्ठः प्राणः।। प्रश्नोपनिषद।।२/३।।** जो स्थूल शरीर को बनाए रखता है लेकिन विभिन्न शारीरिक प्रक्रियाओं और क्रियाओं के आधार पर प्राण को अलग–अलग नाम दिए गए हैं। इसी आधार पर प्राण को 10 प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है। मूलतः इसके पाँच मुख्य विभाग **प्राणो व्यानोऽपान उदानः समानः।। तैत्तिरीय उपनिषद।।१/७।।** और पाँच उप–विभाग हैं। मुख्य विभाग हैं प्राण (हृदय एवं नाभि मण्डल में स्थित होकर श्वसन को नियंत्रित करना, अपान (उत्सर्जन तंत्र), समान (पाचन तंत्र) व्यान (परिसंचरण तंत्र, कर्ण, गुल्फ, स्कन्ध, ग्रीवा और उदान (प्राण की प्रतिक्रियाएं और अंतिम निष्कासन, उपविभागों में नाग, कूर्म, कृकल, धनंजय और देवदत्त हैं– **नागादिवायवः पंच त्वगस्थादिषु संस्थिता।। त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद।।८२।।**

शरीर के ऊपरी भाग में प्राण का वास होता है–**प्राण एवाथवा ज्येष्ठो जीवात्मानं विर्भति यः। आस्यनासिकयोर्मध्यं हृदयं नाभिमण्डलम्।। त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद।।७६।।** यह हमारे संवेदी अंगों को संचालित करता है और फेफड़े, हृदय, भोजन नली और श्वसन प्रणाली को भी सक्रिय करता है। सांस लेने और छोड़ने की सतत प्रक्रिया ही वास्तव में प्राण है। ऊपर की ओर बढ़ने वाली अपान या वायु मलाशय क्षेत्र में रहती है **अपानश्चरति,ब्रह्मन्गुदमेढ्रोरुजानुष्।। त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद।।८०।।** यह एक शोधक की भूमिका निभाता है और मल और प्रदूषित वायु के निष्कासन को नियंत्रित करता है। हृदय से नाभि तक चलने वाली विभिन्न प्रक्रियाएं समान के माध्यम से संपन्न होती हैं–**समानः सर्वगात्रेषु सर्वव्यापी व्यवस्थितः।। त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद।।८१।।** यह नाभि क्षेत्र में रहता है और यकृत, आंत, प्लीहा, अग्न्याशय और अन्य पाचन अंगों से संबंधित सभी कार्यों को नियंत्रित करता है। यह भोजन से बने रस को शरीर के विभिन्न भागों में आपूर्ति करता है, व्यान (परिसंचारण) संवेदी अंगों सहित पूरे शरीर में फैला हुआ है–**व्यानः श्रोत्रेरूकट्यां च गुल्फस्कन्धगलेषु च।। त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद।।८२।।** यह सभी अंगों से संवेदनाओं को मस्तिष्क तक पहुंचाता है और वहां से संदेश संवेदी अंगों तक प्रेषित होते हैं। यह पूरे शरीर में अर्थात् सभी स्थानों पर प्रसारित होता है और ऊर्जा प्रदान करता है और मांसपेशियों, ग्रंथियों, तंत्रिकाओं आदि को सक्रिय करता है। उदान वायु जो ऊपर की ओर बढ़ती है वह गले से सिर तक सक्रिय रहती है। **उदानः सर्वसन्धिस्थः पादयोर्हस्तयोरपि।। त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद।।८१।।** यह ऊपरी शरीर में मौजूद अंगों को ऊर्जा और गतिशीलता देता है और मन को निचले से ऊंचे स्तर तक पहुंचाने का कार्य करता है। छींक आना, नींद आना, प्यास लगना, भूख लगना, तृप्ति महसूस होना, डकार आना, हिचकी आना और सूजन जैसी छोटी–छोटी प्रक्रियाएँ नाग, कूर्मादि जैसे उप–प्राण द्वारा नियंत्रित होती हैं। पांच प्राण की ताकत आत्मविश्वास को उच्चतम स्तर तक बढ़ाती है और प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करती है। प्राणशक्ति ही रोग–लड़ने की क्षमता और जीवन का आधार है। प्राणशक्ति का नियंत्रण (साधना) जीवन की सभी सफलताओं और उपलब्धियों

का आधार है। यह शारीरिक कल्याण, मानसिक शक्ति और मन की एकाग्रता सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्राणशक्ति को नियंत्रित करने से मन और ज्ञानेन्द्रियाँ स्वतः नियंत्रित हो जाती हैं। जीवनी शक्ति को नियंत्रित करने की प्रक्रिया को योग में प्राणायाम के रूप में जाना जाता है। जहां भौतिक या स्थूल शरीर का निर्माण भोजन से होता है, वहीं प्राण को प्राण ऊर्जा या जीवन के सार से गठित एक अलग खंड (प्राणमय कोष) के रूप में मान्यता दी गई है।**(स्वामी रामदेव, 2006, प्राणायामः इसका दर्शन और अभ्यास)**।

जब तक प्राकृतिक प्रक्रियाएँ ठीक से चलती रहती हैं तब तक स्थूल शरीर ऊर्जावान रहता है और मानसिक गतिविधियाँ आशा और उत्साह से प्रेरित रहती हैं, परन्तु अस्त–व्यस्त जीवनचर्या (बुरे आचरण, बुरे खान–पान और बुरे विचारों) से प्राण दूषित और उत्तेजित हो जाता है और शरीर की सामान्य क्रियाएँ जैसे भोजन का पचना, रक्त का निर्माण, मलत्याग आदि बाधित हो जाती हैं। प्राणों की शुद्धि की प्रक्रिया को प्राणायाम कहा जाता है। प्राणायाम सभी शारीरिक और मानसिक रोगों को दूर कर जीवन को आसान, सरल और आनंदमय बनाता है। प्राणायाम एक जादू की छड़ी की तरह है, जो निष्क्रिय शरीर को फिर से जीवंत, सक्रिय और ऊर्जावान बना देता है। प्राणायाम इच्छाशक्ति को जाग्रत करता है। वृहदारण्यक उपनिषद में प्राण को अन्न कहा गया है जो औषधियों में सबसे महान औषधि है। प्राणायाम का मुख्य उद्देश्य प्राण ऊर्जा का अधिकतम उपयोग करना है।

मन के संकल्प–विकल्प का नाम प्राण है। यह प्राण परमात्मा से उत्पन्न होता है और इस शरीर में **मनोकृतेन आयाति।।** मन के किये हुए संकल्पों से आता है। इस प्राण को अर्थात् संकल्प–विकल्प को संयमित करना है, प्रकृति से परे परम पुरुष परमात्मा की ओर मनोवृत्ति को प्रेरित करना है। यही प्राणायाम व प्राणायाम में मन का सम्बन्ध सगुण के साथ रहता है वह सगुण प्राणायाम है। और जिसमें मन का सम्बन्ध निर्गुण के साथ रहता है वह निर्गुण प्राणायाम है। 'स' का अर्थ है वह परमात्मा अर्थात् ईश्वर ! जब मन के संकल्प का प्रवाह ईश्वरीय गुणों में रहता है तब प्राणायाम सगुण है जब यही ईश्वरीय गुण सहज प्रवाहित हो गये, तब वह प्रयासशून्य अवस्था निर्गुण प्राणायाम की है।

प्राणायाम की विधि

प्राणायाम की साधना से पूर्व साधक को कुछ विशेष बातों (बिन्दुओं) को ध्यान रखने का उपदेश देते हुए कहा है–

आदौ स्थानं तथा कालं मिताहारं तथात्परम्।
नाडीशुद्धिश्च ततः पश्चात्प्राणायामं च'।।घेरण्ड संहिता ।।५/२।।

कहने का तात्पर्य है कि साधक को प्राणायाम का अभ्यास दूरदेश, अरण्य अथवा राजधानी में नहीं करना चाहिए अपितु धर्मशील देश में जहाँ शान्ति हो, भोजन पानी की समुचित व्यवस्था हो एवं स्थान सुरक्षित हो वहाँ करना चाहिए। प्राणायाम के अभ्यास के लिये सूर्योदय से पूर्व का समय सर्वोत्तम माना जाता है क्योंकि उस समय वातावरण में प्राणतत्त्व की अधिकता होती है, इसके साथ ही यह भी ध्यान रखना चाहिए कि प्राणायाम के अभ्यास का आरम्भ 'हेमन्त' 'शिशिर' या 'ग्रीष्म ऋतु' में नहीं करना चाहिए क्योंकि ये ऋतुएँ रोग को बढ़ाने वाली होती हैं –

'हेमन्त शिशिरे ग्रीष्मे वर्षायां च ऋतौ तथा।
योगारम्भं न कुर्वीत कृते योगो हि रोगदः'।।घेरण्ड संहिता ।।५/८।।

अतः अभ्यास का आरम्भ सदैव 'बसन्त' एवं 'शरद' ऋतु में ही करना चाहिए। प्राणायाम साधना में आहार भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है क्योंकि 'जैसा खाओ अन्न वैसा बने मन' अतः अभ्यास की प्रारम्भिक अवस्था में दुग्ध एवं घृत का भोजन करने के साथ–साथ गेहूँ, मूँग एवं चावल का भोजन चित्त को वश में करने में सहायक होने के साथ ही योग में वृद्धि प्रदान करता है –

'अभ्यासकाले प्रथमं शस्तं श्रीराज्यभोजनम्।
गोधूममुद्धशाल्यन्नं योगवृद्धिकरं विदुः'।। योगतत्त्वोपनिषद् ४८–४९।।

गीता में भी कहा गया है कि –

'युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा'।। भगवत्गीता ६/१७।।

इसके पश्चात् प्राणायाम की क्रियाविधि का विधिवत् वर्णन करते हुए कहा गया है – सर्वप्रथम 'आसन लगाकर शरीर को सीधा करके बैठें। नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि रखकर दाँतों द्वारा दाँतों का स्पर्श न करते हुए जिना को तालु से लगाकर स्वस्थ चित्त एवं निरामय भाव से सिर को आकुंचित करते हुए योगमुद्रा में हाथों को आबद्ध करके प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए तथा पूरक, कुम्भक, रेचक के द्वारा वायु का शोधन करते हुए पुनः रेचक की क्रिया से समस्त नाड़ियों को शुद्ध करके धीरे–धीरे इनकी संख्या में वृद्धि करने का प्रयास करना चाहिए।

स्पर्शान्कृत्वा बहिर्बाह्यांश्चक्षुचैवान्तरे भ्रुवोः।
प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यन्तरचारिणौ।। भगवत्गीता (५/२७)।।

इन्द्रियों और विषयों के कार्यों को बाहर ही त्यागकर, भृकुटि के मध्य में दृष्टि को स्थिर कर (सीधी दृष्टि नासाग्र के सामने जहाँ पड़ती हो, वहाँ दृष्टि को स्थिर कर) मन की दृष्टि को वहाँ स्थिर कर प्रयत्नपूर्वक श्वास में लगायें और **"नासाभ्यंतरचारिणी"** नासिका में विचरनेवाली वायु को देखें कि श्वास कब अन्दर आयी और कब बाहर गयी। साधक की श्वास ओम् या प्रणव के अतिरिक्त कुछ कहती ही नहीं मन को द्रष्टा के रूप में रखकर श्वास में उठने वाले शब्द पर ध्यान केन्द्रित करें। व्यक्ति केवल वायु ही ग्रहण नहीं करता अपितु उसके साथ बाह्य वायुमण्डल के संकल्प भी ग्रहण कर लेता है। शुभ–अशुभ संकल्पों की तरंगें भी उसे प्रभावित कर देती हैं। इसी प्रकार श्वास बाहर निकालते समय वह केवल कार्बन डाई ऑक्साइड ही नहीं निकालता बल्कि अपने शुभ–अशुभ संकल्पों की तरंगें भी उसमें मिला देता है। इसलिए श्वास–प्रश्वास पर दृष्टि रखें कि नाम के अतिरिक्त अन्य कोई विचार उसमें मिलने न पाये।

प्राणायाम के लाभ

तत् क्षीयते प्रकाशावरणम्।। पा० यो० सू० २/५२।

प्राणायाम चित्त से अज्ञान, असत्य और क्लेश का आवरण हटा देता है। चित्त परम वास्तविकता के ज्ञान की उज्ज्वल रोशनी से आच्छादित हो जाता है।

धारणासु च योग्यता मनसः।। पा० यो० सू० २/५३)।।

मन में धारण करने की क्षमता आ जाती है। लोग प्राणायाम का प्रयोग शारीरिक व्याधियों को दूर करने के लिए करते हैं, किन्तु योगऋषि महर्षि पतंजलि का स्पष्ट मत है कि प्राणायाम से ईश्वरीय साक्षात्कार में सुगमता और मन में धारण करने की क्षमता का विकास होता है। आरम्भिक अवस्था में मन में न तो रुकने की क्षमता होती है न धारण करने की। जब हम कोई भी कार्य करते हैं, थोड़ी ही देर में मन न जाने कहाँ भागने लगता है। कुछ ही देर में मन अन्य कुछ चिन्तन करने लग जाता है। वह नाम या रूप धारण नहीं कर पाता किन्तु जब बाह्य और अभ्यंतर वृत्तियाँ शान्त होकर एकमात्र प्रणव में प्रवाहित होने लगती हैं, जब विक्षोभ पैदा नहीं होता, उस समय मन में धारणा की क्षमता आ जाती है।

चले वातं चलं चित्तं निश्चले निश्चलं भवेत्।
योगी स्थाणुत्वं आप्नोति ततो वायुं निरोधयेत्।। हठयोग प्रदीपिका २/२।।

वायु के चलायमान होने पर चित्त भी चंचल होता है और वायु के स्थिर हो जाने पर चित्त भी स्थिर हो जाता है और योगी भी स्थिरता को प्राप्त होता है।

कुंभकप्राणरोधांते कुर्याच्चित्तं निराश्रयम।
एवमभ्यासयोगेन राजयोगपदं व्रजेत।। हठयोग प्रदीपिका २/७७।।

प्राणायाम के अभ्यास से मन सभी संशोधनो से मुक्त हो जाता है एवं इसके अभ्यास से साधक राजयोग की उच्च अवस्था को प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार भावपूर्वक प्राणायाम करने से सभी पाप नष्ट हो जाते हैं।

गीताध्ययनशीलस्य प्राणायामपरस्य च।।
नैव सन्ति हि पापानि पूर्वजन्मकृतानि च।।

आसन व प्राणायाम द्वारा प्राण, इन्द्रियों व मन के मल को दूर कर मन को ईश्वर में लगाकर आत्म–साक्षात्कार होता है। **(श्रीमद्भागवद् पुराण ४/८/४४–४/८/७७)**।

प्राणायाम से दिव्य शांति आदि सिद्धियां प्राप्त होती हैं–

शांति– सभी आपत्तियों का शमन कर लेना शांति है।

प्रशांति– भीतर व बाहर के अन्धकार के नाश का नाम प्रशांति है।

दीप्ति– भीतर व बाहर के प्रकाश का नाम दीप्ति है।

प्रसाद–बुद्धि की स्वस्थता का नाम प्रसाद है।

(श्रीशिवमहापुराण–सप्त वायवीय संहिता–उत्तर भाग अध्याय ३७)

निष्कर्ष

प्राणायाम एक शक्तिशाली अभ्यास है जिसमें श्वास–प्रश्वास की गति को नियंत्रित कर एक अद्भुद् शक्ति को प्राप्त किया जा सकता है। प्राणायाम को अपने दैनिक जीवन में शामिल करके मनुष्य अपने शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक कल्याण में गहरा बदलाव महसूस कर सकता है। प्राणायाम के नियमित अभ्यास से साधक शरीर के विभिन्न अंगों में होने वाली प्राण–संचार की अव्यवस्था से होने वाले विभिन्न रोगों को दूर कर प्राणायाम के अधम एवं मध्यम स्तर को पार करता हुआ श्रेष्ठ स्तर को प्राप्त कर लेता है जिसके परिणामस्वरूप वह वायुजय, इन्द्रियजय, अल्पाहारी, तेजोमय एवं बलवान होकर उस आत्मतत्त्व से पूर्ण ज्ञान को भी प्राप्त करने में समर्थ हो जाता है जिससे 'ज्ञान का आवरण करने वाले समस्त कर्म क्षीण हो जाते हैं इसलिये एक गहरी सांस लें, प्राणायाम का अभ्यास करें और समग्र स्वास्थ्य और जीवन शक्ति की ओर यात्रा शुरू करें।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- हठयोग प्रदीपिका, टी0 तथा प्र0 रामलाल श्रीवास्तव, गोरक्षनाथ मन्दिर, गोरखपुर।
- योगवासिष्ठ, डॉ0 महाप्रभ ुलाल गोस्वामी, ताराबुक एजेन्सी, वाराणसी।
- बृहदारण्यकोपनिषद् एक अध्ययन, डॉ0 मनुदेव बंधु, ईस्टन बुक लिंकर्स, न्यू चन्द्रावल, जवाहर नगर, दिल्ली प्र0सं0 1990।
- पातंजलयोगप्रदीप, श्रीस्वामी ओमानन्दतीर्थ, गीताप्रेस, गोरखपुर।
- श्रीमद्भगवद्गीता, श्रीहरिकृष्णदास गोयन्दका, गीताप्रेस, गोरखपुर।
- घेरण्डसंहिता (महर्षि घेरण्ड की योगशिक्षा पर भाष्य), स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती, योग पब्लिकेशन ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार पृ0सं0 1997।
- ऋग्वेद संहिता (भाषा भाष्य सम्पूर्ण), महर्षि दयानन्द सरस्वती, दयानन्द संस्थान, नई दिल्ली।
- एक सौ आठ उपनिषद् (साधना खण्ड, ज्ञानखण्ड, ब्रह्मविद्या खण्ड), पं0 श्री रामशर्मा आचार्य, ब्रह्मवर्चस् शान्तिकुंज हरिद्वार, उत्तरांचल, 1993।
- श्रीमदभगवद्गीता, गीता प्रेस, गोरखपुर, 14वां संस्करण, सं. 1963।
- 'कल्याण' संक्षिप्त योगवासिष्ठ अंक–35वाँ विशेषांक, गीता प्रेस गोरखपुर।
- योग–समन्वय, अरविन्द, श्री अरविन्द आश्रम प्रकाशन विभाग, पांडिचेरी, 2003।
- अष्टांग योग, चरणदास, कैवल्यधाम श्रीमन्माधव योगमन्दिर समिति, लोनावला, पुणे, 2010।